मोदी, शाह ने जो कहा वो सच हुआ, कैसे ?

नरेंद्र मोदी और अमित शाह ने चुनाव नतीजों को लेकर जो भविष्यवाणी की, वह सब पूरी हुई। मोदी ने प्रचार में कहा कि कांग्रेस पार्टी 50 सीटों के लिए लड़ रही है, तब ऐसा लगा था कि वे कांग्रेस का मनोबल तोड़ने के लिए ऐसा कह रहे हैं। अमित शाह ने कहा कि भाजपा उत्तर प्रदेश में और देश के दूसरे राज्यों में 51 फीसदी वोट लेने के लिए काम करेगी तो लगा कि यह पार्टी अध्यक्ष का बड़बोलापन है। जब मोदी और शाह दोनों ने कहा कि भाजपा पिछली बार से ज्यादा सीटों पर जीतेगी तब ऐसा लगा कि अपने नेताओं, कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ाने के लिए उन्होंने ऐसा कहा। जब दोनों ने पश्चिम बंगाल में 23 और ओड़िशा में 12 सीटें जीतने का दावा किया और कहा कि बंगाल भाजपा के लिए दूसरा त्रिपुरा बनेगा, तब भी यहीं माना गया कि यह भाजपा की सदिच्छा है, जिसके पूरा होने की कोई संभावना नहीं है। कर्नाटक में कांग्रेस और जेडीएस के तालमेल के बावजूद पहले से ज्यादा सीट जीतने का दावा भी हवा हवाई ही लगा। पर हकीकत है कि इन दोनों नेताओं ने जो कहा वह सब हो गया।

सो, सवाल है कि कैसे हो गया ? ये दोनों नेता क्या कोई नजूमी हैं, जिन्हें भविष्य का सब कुछ दिखता है ? या उनके सितारे इतने बुलंद हैं कि जो मुंह से निकला, उसे ब्राह्मांड की सारी शक्तियां पूरा करने में लग जाती हैं ? या वे इतने परफेक्ट हैं कि जो बोलते हैं उसे पूरा करने के लिए हर तरह के प्रयास करते हैं और सफल होते हैं ? राजनीतिक नजरिए से असली कारण यहीं दिखता है कि मोदी और शाह जो कहते हैं उसे पूरा करने के लिए बहुत बारीकी से रणनीति बनाते हैं और उस रणनीति पर पूरी ताकत से अमल करते हैं। वे साम, दाम, दंड, भेद के चारों उपाय आजमाते हैं। वे इस बात में विश्वास करते हैं कि जंग में सब कुछ जायज है क्योंकि जीतने के बाद यह कोई याद नहीं रखता है कि जीतने के लिए क्या साधन इस्तेमाल किए गए।

जिस तरह से गुजरात में रहते हुए 2009 के लोकसभा चुनाव के बाद दोनों ने केंद्र में अपने लिए अवसर देखा और 2014 के चुनाव का कैलेंडर बना कर एक रोडमैप के साथ उस पर काम करना शुरू किया। वैसे ही 2014 के चुनाव के बाद मोदी और शाह ने 2019 का कैलेंडर बनाया। उन्होंने तय किया कि पांच साल क्या क्या करना है, जिससे 2019 में पांच साल का हिसाब किताब मांगने से ज्यादा देश के मतदाता आगे भी पांच साल मोदी को देने के लिए बावले हो जाएं। इसके लिए उन्होंने बहुस्तरीय रणनीति बनाई। संघ और भाजपा की रणनीति हमेशा कई स्तर की होती है। योगी आदित्यनाथ अगर दीर्घकालिक रणनीति का हिस्सा हैं तो प्रज्ञा सिंह ठाकुर अल्पकालिक रणनीति का। बहरहाल, कई स्तर की इस रणनीति में तीन-चार चीजें बहुत स्पष्ट रूप से दिख रही हैं, जिनके आधार पर नतीजों का विश्लेषण होना चाहिए।

सबसे पहलेदोनों ने 2014 में ब्रांड मोदी की ताकत को पहचाना। यह ब्रांड मूल रूप से हिंदू हृदय सम्राट का था पर उसके ऊपर बहुत होशियारी से विकास का मुलम्मा चढ़ाया गया था। गुजरात मॉडल की मीठी चाशनी में लपेट कर हिंदुत्व का ब्रांड देश के लोगों को बेचा गया। मोदी ने दूसरी बार चुने जाने के बाद गुजरात के अपने पहले भाषण में जो कहा वह इसकी पुष्टि है। उन्होंने कहा कि 2014 में देश उनको नहीं जानता था पर गुजरात के विकास को जानता था। असल में यह सच नहीं है। देश उनको ही जानता था

और उन्होंने देश को गुजरात के विकास मॉडल के बारे में बताया। बहरहाल, 2014 के बाद पांच साल मोदी के ब्रांड को विकास, धार्मिक राष्ट्रवाद और वंचित समाज की उम्मीदों के रैपर में लपेट कर प्रस्तुत किया गया। इसी क्रम में मोदी के ब्रांड को चुनौती देने वाले बाकी सारे ब्रांड्स को किसी न किसी तरीके से ध्वस्त किया गया। ध्यान रहे मार्केटिंग गुरू फिलिप कोटलर का मशहूर उद्धरण है कि जो चीजें जीवन के लिए जरूरी नहीं होती हैं वो विज्ञापन के सहारे बेची जाती हैं। यह बात राजनीति पर भी लागू होती है।

सो, इस बार के चुनाव नतीजों का विश्लेषण करने के लिए इन तीन-चार चीजों को अलग अलग समझना होगा। सबसे पहले ब्रांड मोदी की ताकत और उसे लोगों तक पहुंचाने के लिए किए गए प्रयासों और उससे हुए फायदे को समझना होगा। इसके बाद दूसरा विश्लेषण धार्मिक राष्ट्रवाद के नैरेटिव का करना होगा। भाजपा अपने को राष्ट्रवादी पार्टी कहती रही है और हिंदुओं की पार्टी भी मानी जाती है। पर कभी भी भाजपा ने खुल कर हिंदू राष्ट्रवाद की राजनीति नहीं की। अटल बिहारी वाजपेयी की बात छोड़िए उनके समय सबसे कट्टरपंथी माने जाने वाले लालकृष्ण आडवाणी ने भी ज्यादा से ज्यादा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की बात कही। पर नरेंद्र मोदी और अमित शाह ने हिंदुवाद और राष्ट्रवाद को मिला कर हिंदू राष्ट्रवाद की राजनीति की। इसके सहारे भाजपा को जाति का बंधन तोड़ने में सफलता मिली और लोकप्रिय विमर्श की धारा बदलने में कामयाबी मिली।

इसके साथ जो तीसरा नैरेटिव था वह सबाल्टर्न यानी वंचितों की उम्मीदों और आकांक्षाओं का था। इसे बहुत होशियारी से धार्मिक राष्ट्रवाद के नैरेटिव के सहारे आगे बढ़ाया गया। इसमें मोदी की जाति का प्रचार भी शामिल है और बिल्कुल माइक्रो लेवल पर उम्मीदवार चुनते समय जातिगत समीकरण बनाना भी शामिल है। चौथी चीज इसी तीसरे नैरेटिव का हिस्सा है। वह है मोदी को गरीबों का मसीहा बनाने का प्रचार। कई लोकप्रिय योजनाओं के सहारे भाजपा ने गरीबी हटाओ के कांग्रेस के नारे को हथिया लिया और इसका उसे चुनाव में बड़ा फायदा हुआ। सो, जनादेश 2019 का विश्लेषण मोटे तौर पर तीन मुद्दों – ब्रांड मोदी की ताकत, धार्मिक राष्ट्रवाद और सबाल्टर्न नैरेटिव पर होगा। इन तीन बातों में ही भाजपा को 22 करोड़ वोट मिलने का राज छिपा है। बारी बारी से अगले तीन दिन इन तीन मुद्दों पर विचार करेंगे।

कैसी थी मोदी और शाह की रणनीति

पांच साल के शासन में नरेंद्र मोदी की सरकार ने सबसे ज्यादा ध्यान ब्रांड मोदी को स्थापित करने पर दिया था। यहीं उनकी जीत का सबसे बड़ा कारण भी है। भाजपा को सबसे ज्यादा वोट ब्रांड मोदी के कारण मिले हैं। इस बात को नरेंद्र मोदी और अमित शाह जानते थे, तभी उन्होंने बिल्कुल मनमाने अंदाज में उम्मीदवार बदले और टिकट बांटे। लोग इस बात पर छाती पीटते रहे कि गोरखपुर सीट पर रवि किशन को लड़ा दिया तो गुरदासपुर सीट पर सन्नी देओल को उतार दिया या छत्तीसगढ़ में सारे जीते सांसदों की टिकट काट दी। इससे नतीजों पर कोई असर नहीं हुआ। समूचा प्रचार इस बात पर हुआ कि पार्टी और उम्मीदवार को देखने की जरूरत नहीं है। कमल के निशान का बटन दबाओ तो वोट सीधे मोदी को जाएगा। तभी नीतीश कुमार जैसे क्षत्रप ने भी मोदी के नाम पर वोट मांगे और महाराष्ट्र में शिव सेना के उम्मीदवारों ने भी बाला साहेब ठाकरे की बजाय नरेंद्र मोदी के नाम पर वोट मांगा।

मोदी ब्रांड की यह ताकत चुनाव से पहले हुए सर्वेक्षणों से भी जाहिर हुई थी। देश के कुछ दक्षिणी राज्यों को छोड़ दें तो लगभग पूरे देश में प्रधानमंत्री पद के दावेदारों में कोई भी मोदी के आसपास नहीं था। अप्रैल-मई में सीएसडीएस-लोकनीति के सर्वेक्षण में नरेंद्र मोदी अपने निकटतम प्रतिद्वंद्वी यानी राहुल गांधी से 18 परसेंटेज प्वाइंट से आगे थे। उसी समय भाजपा के समर्थक मतदाताओं में 87 फीसदी मोदी को प्रधानमंत्री देखना चाहते थे तो भाजपा की सहयोगी पार्टियों के भी 73 फीसदी लोग मोदी को पीएम बनाने के लिए वोट करना चाहते थे। सबसे हैरानी की बात है कि लेफ्ट के समर्थक 27 फीसदी और बसपा के समर्थक 16 फीसदी मतदाता भी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को देखना चाहते थे। सो, हैरानी नहीं होनी चाहिए, जो पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश में ऐसा नतीजा आया।

सवाल है कि मोदी का यह ब्रांड कैसे लोगों तक पहुंचा और कैसे उनके दिलदिमाग में स्थापित हुआ? इसका जवाब है प्रचार के जरिए। यह महज संयोग है कि केंद्र में नरेंद्र मोदी की सरकार बनने के तुरंत बाद एक मामले में सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि सरकारी विज्ञापनों में सिर्फ प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री की फोटो छपेगी। सो, प्रचार सिर्फ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का हुआ और चूंकि ज्यादातर राज्यों में भाजपा की सरकारें बन गईं तो वहां भी मुख्यमंत्रियों के साथ साथ या उनसे ज्यादा प्रधानमंत्री का प्रचार हुआ। सूचना के अधिकार कानून के तहत हासिल एक जानकारी के मुताबिक करीब साढ़े पांच हजार करोड़ रुपए केंद्र सरकार के विज्ञापनों पर खर्च हुए। जाहिर है केंद्र सरकार का विज्ञापन प्रधानमंत्री का ही प्रचार था। इसके बाद राज्यों के हजारों करोड़ के विज्ञापन थे। फिर भाजपा का अपना प्रचार था। सो, हजारों करोड़ रुपए के इस प्रचार से मोदी का नाम गांव-गांव तक पहुंचा।

ऐसा नहीं है कि सिर्फ ब्रांड मोदी के नाम को स्थापित करके जीत को सुनिश्चित मान लिया गया। इसके समानांतर राहुल गांधी को 'पप्पू' साबित करने का प्रचार भी हुआ। इसके लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल किया गया। राहुल गांधी के भाषणों के अंशों को संपादित करके यह बताया गया कि वे आलू से सोना बनाने की तकनीक ला देंगे। असल में राहुल ने कहा था कि मोदी जी ऐसा वादा करते हैं कि वे ऐसी मशीन देंगे, जिसमें एक तरफ से आलू डालने पर दूसरी ओर से सोना निकलेगा। लेकिन इसे संपादित करके इसका इस्तेमाल राहुल को पप्पू बताने के लिए किया गया। यह एक मिसाल है। ऐसे काम अनगिनत भाषणों और वीडियो के साथ किया गया। इसके बाद अपने आप भाजपा ने मोदी के कंट्रास्ट में राहुल को खड़ा किया।

यह प्रचार की अगली कड़ी थी। पहले मोदी की सकारात्मक छवि की ब्रांडिंग हुई, उसके बरक्स राहुल गांधी की 'पप्पू' वाली छवि का प्रचार हुआ और उसके बाद मोदी के मुकाबले राहुल को खड़ा किया गया। तभी पूरे चुनाव में हाशिए पर के मतदाता यह सवाल पूछते नजर आए कि मोदी को नहीं चुनें तो क्या राहुल को चुन दें? मोदी बनाम राहुल या मोदी बनाम कौन का प्रचार भाजपा के लिए सबसे ज्यादा फायदेमंद साबित हुआ। यह ध्यान रखने की बात है कि जब नेता के प्रति सद्भाव हो और उसकी सकारात्मक छवि का प्रचार हो तो उसकी लोकप्रियता वोट में तब्दील होती है। दिल्ली में अरविंद केजरीवाल और बिहार में नीतीश कुमार को इसका फायदा मिला था। पांच बार से ओड़िशा के मुख्यमंत्री नवीन पटनायक को इसका फायदा मिल रहा है। विकल्पहीनता की स्थिति बता कर विपक्ष को बौना बना देना, चुनाव जीतने का सचमुच एक सफल फार्मूला है।

विपक्ष को रक्षात्मक बनाने के लिए मोदी के साथ साथ अमित शाह का भी प्रचार हुआ। यह नैरेटिव बनाया गया कि मोदी हैं तो मुमकिन है और शाह हैं तो संभव है। सोशल मीडिया में शाह को लेकर वायरल होने वाले पोस्ट को देखें तो इसके असर का अंदाजा होगा। सोशल मीडिया में यह बताया जाता है कि कैसे शाह चाहें तो पाकिस्तान में भी भाजपा की सरकार बना सकते हैं। शाह चाहें तो चुटकियों में किसी राज्य की सरकार गिरा सकते हैं। कांग्रेस अध्यक्ष का भी चुनाव हो तो शाह ही जीत जाएंगे। ऐसे मीम हजारों नहीं, लाखों की संख्या में सोशल मीडिया में दिख जाएंगे। इनके सहारे भाजपा ने धारणा की लड़ाई जीती। आम आदमी में यह मैसेज कराया कि इनके सिवा और कोई नहीं है और दूसरी ओर विपक्ष को धारणा के स्तर पर, मनोबल के स्तर पर पराजित कर दिया।

ध्यान रखें की पहली लड़ाई दिमाग की जीती जाती है, जो चुनाव से पहले ही मोदी और शाह जीत चुके थे। यह बात स्थापित की जा चुकी थी कि मोदी में रामायण के बाली जैसी क्षमता है, जो वे अपने दुश्मन की आधी शक्ति पहले ही छीन लेते हैं। ब्रांड की इस ताकत के बाद जीत दिलाने वाला सबसे अहम मुद्दा राष्ट्रवाद का नैरेटिव था।

साभार- https://www.nayaindia.com से